बुनियादी साक्षरता एवं संख्या ज्ञान
एक वैकल्पिक समझ

मुकेश मालवीय

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में उल्लेख है कि 'शिक्षा प्रणाली की सर्वोच्च प्राथमिकता 2025 तक प्राथमिक विद्यालय में सार्वभौमिक मूलभूत साक्षरता और संख्या-ज्ञान प्राप्त करना होगी'। वर्तमान में, प्रारम्भिक स्कूली कक्षाओं के बच्चों के एक बड़े वर्ग को बुनियादी साक्षरता (सरल वाक्यों को पढ़ना) और संख्याओं के प्रतीकों को समझने का हुनर हासिल नहीं है। इसके लिए देश में एक मिशन मोड परियोजना 'निपुण भारत' के नाम से चल रही है जो इन बुनियादी कौशलों को बच्चों को हासिल कराने के लिए बहुत सारे संसाधन और वित्त लगा रही है।

शुरुआती शिक्षा प्राप्त कर रहे बच्चे दो से अधिक वर्षों तक स्कूल में हर दिन लगभग चार से पाँच घण्टे मौजूद रहने के बाद भी पढ़ना-लिखना क्यों नहीं सीख पा रहे हैं? इस कठिनाई और कमज़ोरी को अगर हम समझने की कोशिश करें तो सबसे पहले हमें यह जानना होगा कि:

- बच्चे लिखित भाषा को पढ़ना कैसे और कब सीखते हैं?
- संख्याओं के प्रतीकों को पढ़ना, समझना और उन्हें गणना करने में इस्तेमाल करने का कौशल उन्हें कैसे हासिल होता है?
- क्या यह एक पड़ाव/स्तर आधारित प्रक्रिया है जो किसी कक्षा में जाकर पूरी हो जाती है? या, इसमें एक निरन्तरता है?

दूसरी बात जो जाननी होगी, वह यह कि बच्चे लिखित भाषा पढ़ सकें और संख्याओं को समझ सकें, इन कौशलों को सिखाने के लिए क्या एक अनुभवी और स्थापित शिक्षक को कोई गूढ़ ज्ञान और तकनीक आधारित समझ को आत्मसात करना होता है, या फिर स्कूल की परिस्थितियों और बच्चों के पारिवेशिक अनुभवों से बनी शिक्षक की निजी समझ भी कारगर हो सकती है?

वक्त कहाँ गुम?

बुनियादी साक्षरता और संख्या-ज्ञान हासिल नहीं कर पाने वाले इन बच्चों में से अधिकांश सरकारी प्राथमिक स्कूल के हैं। क्या यह समस्या बच्चों के न सीखने की है, या सरकारी स्कूली व्यवस्था की कार्यशैली की? इतने सारे बच्चे क्यों

नहीं सीख पा रहे हैं? मैं सरकारी स्कूल का ही शिक्षक हूँ, और इसी ढाँचे में काम करते हुए इस व्यवस्था से सम्बद्ध बहुत-से लोगों से लगातार मिलना-जुलना होता रहता है। यही वह ढाँचा है जो उन बच्चों तक पहुँचता है जिन्हें मदद की सबसे अधिक ज़रूरत है।

अगर एक-दो वर्ष से अधिक समय तक बच्चे इन स्कूलों में आ रहे हैं और पढ़ना-गिनना नहीं सीख पा रहे हैं, तो इसका सबसे स्पष्ट और प्रमुख कारण यह है कि शिक्षक और बच्चों के बीच इस प्रक्रिया के लिए ज़रूरी अन्त:क्रियाएँ नहीं हो पा रही हैं।

मैं इसी वस्तुस्थिति का आकलन एवं विश्लेषण करूँगा कि पढ़ना-गिनना सीखने की इस प्रक्रिया में बच्चों के साथ उनका शिक्षक किस तरह से मौजूद है। एक बेहद सरल और आम धारणा है कि सरकारी प्राथमिक स्कूल के शिक्षक बच्चों को शिक्षित करने के लिए मौजूद होते हैं। इस धारणा को थोड़ा खोलकर देखते हैं।

दरअसल, सरकारी स्कूली व्यवस्था कई तरह से शिक्षक को स्कूल के वक्त में बच्चों से दूर करती है। इन बच्चों के लिए सरकारी प्रोत्साहन योजनाओं का क्रियान्वयन समय पर करना, शिक्षक का लाज़मी कर्तव्य है। मध्यान्ह भोजन, गणवेश, छात्रवृत्ति,

जाति प्रमाण-पत्र, आधार नम्बर, समग्र आईडी, स्वास्थ परीक्षण आदि बच्चों के हित से जुड़े कार्य हैं। समाज हित, ग्राम हित व देश हित की अन्य सरकारी योजनाओं में भी इन प्राथमिक शिक्षकों की अहम भूमिका है। यह तथ्य इतनी बार दोहराया जा चुका है कि कहते और सुनते ही इसे अनसुना करना ज़रूरी हो गया है। परन्तु मैं साथ में इस तथ्य पर ज़ोर दे रहा हूँ कि इन कार्यों को करने के लिए शिक्षक स्कूल के समय में कई दिनों/घण्टों तक बच्चों से दूर हो जाते हैं। इसका सबसे ज़्यादा असर प्रारम्भिक स्तर के बच्चों पर, उनके पढ़ने-लिखने और संख्या को समझने के कौशल के विकसित न हो पाने के रूप में दिखता है। साथ ही, इन कार्यों की वजह से अक्सर शिक्षक के ऊपर बच्चों को न सिखाने की प्रवृत्ति हावी होती जाती है।

पढ़ना सीखने और संख्या सम्बन्धी भाषा को प्रतीकों के ज़रिए इस्तेमाल करना सीखने में सक्षम बनने के लिए बच्चों को एक गाइड की ज़रूरत तो पड़ती ही है, जो उनकी स्कैफोल्डिंग कर सके। सरकारी स्कूलों में पढ़ने वाले बच्चों के लिए यह एकमात्र गाइड उनके शिक्षक ही हैं, और यही मार्गदर्शक उन बच्चों को पर्याप्त समय तक उपलब्ध नहीं हैं।

हालाँकि, यह भी सत्य है कि शिक्षा के इतर काम में लगे रहने के बाद भी

पीजी सिवनी ज़िले के एक ब्लॉक में जनशिक्षक हैं। उनके पास 22 स्कूलों के शिक्षक और बच्चों की शिक्षा को जानने के मौके होते हैं। वे कहते हैं कि स्कूल में शिक्षक बच्चों के साथ सीखने-सिखाने की प्रक्रिया करते कम ही मिलते हैं। इन स्कूलों में आने वाले ज़्यादातर बच्चे कामकाजी बच्चे हैं। उनके काम का सम्मान करने वाले शिक्षक ही उन्हें सिखाने में सफल होते हैं।

आरजी भोपाल के एक ब्लॉक में जनशिक्षक हैं। वे कहते हैं कि प्राथमिक शाला के शिक्षकों को बच्चों को पढ़ाने का समय मुश्किल से मिल पाता है। उन्हें अपने संकुल में एक 'अच्छा स्कूल' के दिखावे के लिए बहुत-से झूठ गढ़ने होते हैं।

टीजी बनखेड़ी ब्लॉक के शिक्षक हैं। वे अपना स्कूल अच्छे से चला रहे थे व बच्चे सीख रहे थे। फिर उनका स्कूल नुमाइश बनने लगा। अब वे अपने स्कूल में रह ही नहीं पाते। तमाम अन्य जगह उन्हें यह बताने के लिए भेजा जा रहा है कि अच्छा स्कूल कैसे बनाएँ।

बहुत-से शिक्षक बच्चों को यह हुनर हासिल करवा देते हैं, या करवा सकते हैं। एक शैक्षिक सत्र में किसी शिक्षक के पास इतना समय तो निकल ही आता है कि वह बच्चों को एफएलएन (फाउंडेशनल लिटरेसी एंड न्यूमरेसी, या बुनियादी साक्षरता व संख्या-ज्ञान) का हुनर सिखाने का हौसला दे पाए। पर इस कम वक्त को भी कई शिक्षक कुछ अलग-अलग वजहों से ठीक से इस्तेमाल नहीं कर पा रहे हैं। इन वजहों को पहचानने की ज़रूरत है जो अक्सर स्पष्ट रूप से नहीं दिखतीं। मैं यहाँ इनमें से कुछ वजहों को जाँचने-परखने का प्रयास कर रहा हूँ।

शिक्षक उदासीन क्यों?

शिक्षण के अलावा किए जा रहे कामों का एक मनोवैज्ञानिक प्रभाव शिक्षक पर इस तरह से पड़ता है कि बच्चों की शिक्षा के प्रति उसका दायित्व बोध बहुत क्षीण होता जाता है। उसे इस दायित्व को पूरा न कर पाने का अफसोस नहीं होता क्योंकि खुद के लिए उन्होंने इसका वितर्क बना लिया है।

इन स्कूलों में पढ़ने वाले बच्चे और उनके पालक शिक्षक से अपनी एवं अपने बच्चों की शिक्षा की प्रभावी माँग करने में सक्षम नहीं हैं। उनमें अधिकार बोध नहीं है। इन बच्चों और पालकों के जीवन में 'अधिकार' शब्द की उपस्थिति ही बहुत कम है। इन स्कूलों के शिक्षकों द्वारा अपने कर्तव्यों का पालन किया जाना पूरी तरह से उनके खुद के नैतिक आदर्शों एवं मूल्यों पर निर्भर करता है। और ये आदर्श समय के साथ कमज़ोर होते जा रहे हैं।

कुछ शालाओं में शिक्षक और बच्चों के आपसी रिश्ते में एक वर्गभेद

उपज रहा है। शिक्षक सम्पन्न वर्ग और उससे उपजी 'श्रेष्ठता' से जकड़े होते हैं। जिस तरह से सम्पन्न वर्ग के बच्चों पर स्कूल में नियमित उपस्थिति और नकली अनुशासन व तहज़ीब सीखने का अत्यधिक दबाव होता है, सरकारी स्कूलों में शिक्षकों को वंचित वर्ग के बच्चों में वैसी नियमितता और शिक्षा के प्रति गम्भीरता आदि का अभाव नज़र आता है। ऐसी तुलना वे बच्चों की भाषा, स्वच्छता, खानपान जैसे कई पहलुओं में देखते हैं जोकि उनकी उदासीनता को और भी पुख्ता कर देती है।

शिक्षकों के शिक्षकीय प्रतिफल की परख, अवलोकन और नियंत्रण करने वाला दबाव-समूह या तो है ही नहीं, या बहुत कमज़ोर है। इसके कारण शिक्षकों में जवाबदेही का अभाव निर्मित होता जाता है।

औरों के अनुभव

मैं भी इसी व्यवस्था का एक सरकारी शिक्षक हूँ। ये मेरे निजी अनुभव हैं और मेरे बहुत-से साथियों के भी कुछ इसी तरह के अनुभव हैं। साथ ही, अलग-अलग स्कूलों के शिक्षकों से बातचीत कर पर्चे लिखने वाले कुछ अध्येताओं के विचार भी कुछ इसी तरह के ही हैं।

मैंने इस लेख के लिए अलग-अलग ज़िलों – बैतूल, सिवनी, होशंगाबाद, भोपाल और हरदा – के कुछ शिक्षा संकुलों के स्कूलों से सम्पर्क करने वाले जनशिक्षकों से उनके अनुभव जाने हैं। मैं राज्य स्तर का शिक्षक प्रशिक्षक भी हूँ, जिससे मुझे राज्य के हर ज़िले के शिक्षकों से मिलने और उनके अनुभव सुनने-जानने का मौका मिलता है। मैंने उनसे भी इस विषय पर बातचीत की है।

कितने शिक्षक? कितने छात्र?

सरकारी स्कूलों के लिए यह भी एक मिथक ही है कि इन स्कूल में बच्चों की भीड़ है और शिक्षकों की कमी है। दरअसल, सरकारी स्कूलों में बच्चों की संख्या लगातार कम हो रही है और इस वजह से शिक्षकों की तुलनात्मक संख्या बढ़ रही है। अधिकांश सरकारी प्राथमिक स्कूलों में 50 से कम बच्चे और दो से तीन शिक्षकों की नियुक्तियाँ हैं। अधिकांश स्कूलों में कक्षा दो में बच्चों की संख्या दस से कम ही है, और इनमें से पढ़ने में साहस स्तर पर तीन या चार बच्चे ही हैं। (साहस स्तर ऐसा स्तर है जिसमें बच्चों को पढ़ने का आत्मविश्वास होता है कि वे पढ़ सकते हैं और उनके शिक्षक का भी मानना होता है कि उन्हें पढ़ना आता है। हालाँकि, वे शब्दों को अटककर या गलत उच्चारित करते हुए भी पढ़ सकते हैं।) वर्ण ज्ञान आधारित प्रक्रिया (जिसमें बच्चे पहले अक्षरों को पहचानना सीखते हैं फिर मात्राओं को जोड़कर पढ़ना) से पढ़ना सीखने में अर्थ-निर्माण की प्रक्रिया पिछड़ जाती

तालिका 1: शहरी संकुल एस एन जी नर्मदापुरम, ज़िला होशंगाबाद

शाला का नाम	पहली कक्षा में दर्ज़ बच्चे	दूसरी कक्षा में दर्ज़ बच्चे	पढ़ने के साहसी स्तर पर बच्चे	शिक्षकों की संख्या
प्रा.शा. कुलामड़ी	9	14	6	2
हासलपुर	3	6	2	2
मेनबोर्ड	6	9	3	2
विवेकानन्द	11	17	6	2
बालागंज	6	4	2	2
भीमपुरा	4	6	2	3
खोजनपुर	1	3	1	3
रेवागंज	3	5	2	2
आई टी आई	31	32	10	5
कोठी बाज़ार	11	25	10	6
उर्दूशाला	2	3	2	3
जुमेराती	8	8	5	3
डोंगरवाड़ा	4	3	1	3
कन्याशाला	13	13	5	4

है। हाँ, बच्चों को पढ़ने का तकनीकी अभ्यास ज़रूर आ जाता है।

यहाँ मैं दो शिक्षा संकुलों का सत्र 2023-24 का डेटा साझा करना चाहता हूँ (तालिका 1 व 2)। इनमें से एक शहरी संकुल है (एस एन जी नर्मदापुरम, ज़िला होशंगाबाद), और दूसरा ग्रामीण (संकुल डोढरामोहर, ज़िला बैतूल) जो कि शहरी सीमा से लगभग 60 किमी दूर है। इन दोनों संकुलों के स्कूलों में देखें तो ज़्यादातर स्कूलों में कक्षा 1 और 2 में पढ़ाने वाले हरेक शिक्षक के पास अधिकतम 20 से 30 बच्चे ही होंगे। लेकिन बच्चों के पढ़ने की क्षमता जिसे मैं 'साहसी स्तर पर' कह रहा हूँ, वह 5 के आसपास ही है।

किसकी कितनी भूमिका?

यहाँ यह सवाल भी पूछना होगा

तालिका 2: ग्रामीण संकुल डोढरामोहर, ज़िला बैतूल

शाला का नाम	पहली कक्षा में दर्ज़ बच्चे	दूसरी कक्षा में दर्ज़ बच्चे	पढ़ने के साहसी स्तर पर बच्चे	शिक्षकों की संख्या
बदिधाना	6	10	3	1
प्रा.शा. फोफल्या रैयत	11	14	5	3
फोफल्या मॉल	7	5	2	2
निमिया	9	10	6	2
बुडिमाई	1	4	2	2
संगवानी	4	3	2	2
पंड्रासेल	1	4	3	1
डोढरामऊ	15	18	7	2
भीमपुरा	8	8	5	2
खरवार	11	10	4	2
धनवार	8	11	4	1
डावरी	34	27	10	4
सावरीडा	5	3	1	1
डूड़ियाकऊँ	2	2	1	1
तरमखेड़ा	9	3	2	1

नोट: *दोनों तालिकाओं के आखिरी कॉलम में प्राथमिक शालाओं में कुल शिक्षकों की संख्या दी गई है। जिन शालाओं में शिक्षक-संख्या 1 है, उनमें अतिथि शिक्षक को बुलाया जाता है।*

कि प्रत्येक 10-12 बच्चों में से पढ़ना सीख चुके इन तीन या चार बच्चों के सीखने में क्या शिक्षक की कोई महत्वपूर्ण भूमिका है?

एक उदाहरण होशंगाबाद की प्राथमिक शाला x का लेते हैं। इस स्कूल में दो शिक्षक हैं। कक्षा-2 में नौ बच्चे दर्ज़ हैं। इनमें से चार बच्चे पढ़ सकने के साहसी स्तर पर हैं, यानी शिक्षक का भरोसा और विश्वास है कि ये चार बच्चे पढ़ लेते हैं। इनमें से एक बच्चा बरकत (नाम बदला हुआ) है। बरकत के पढ़ सकने का कारण क्या है? जब थोड़ी खोजबीन करके

समझने की कोशिश की, तो पता चला कि उसके पिताजी नहीं रहे, घर में उसकी माँ और एक छोटी बहन है। माँ दसवीं तक पढ़ी हैं और मज़दूरी करती हैं, पर अपने बच्चे को नियमित स्कूल छोड़ती हैं। घर पर बरकत को पढ़ाई में रोज़ मदद करती हैं। बरकत को पढ़ना आता है और उसकी इस उपलब्धि में उसकी माँ का भी/ही योगदान है, ऐसा इस स्कूल की शिक्षिका का भी मानना है। इसी स्कूल में दूसरी कक्षा का एक अन्य बच्चा है – सागर (बदला हुआ नाम)। सागर के पिताजी राजमिस्त्री हैं। माँ भी मज़दूरी करती हैं। वे दोनों सागर को घर पर भी पढ़ने के लिए कहते हैं, मगर वे पढ़ाई में उसकी कोई मदद नहीं कर पाते। सागर अभी पढ़ना नहीं जानता। पर टीचर मैडम का यह भी कहना है कि वह नियमित रूप से स्कूल नहीं आता।

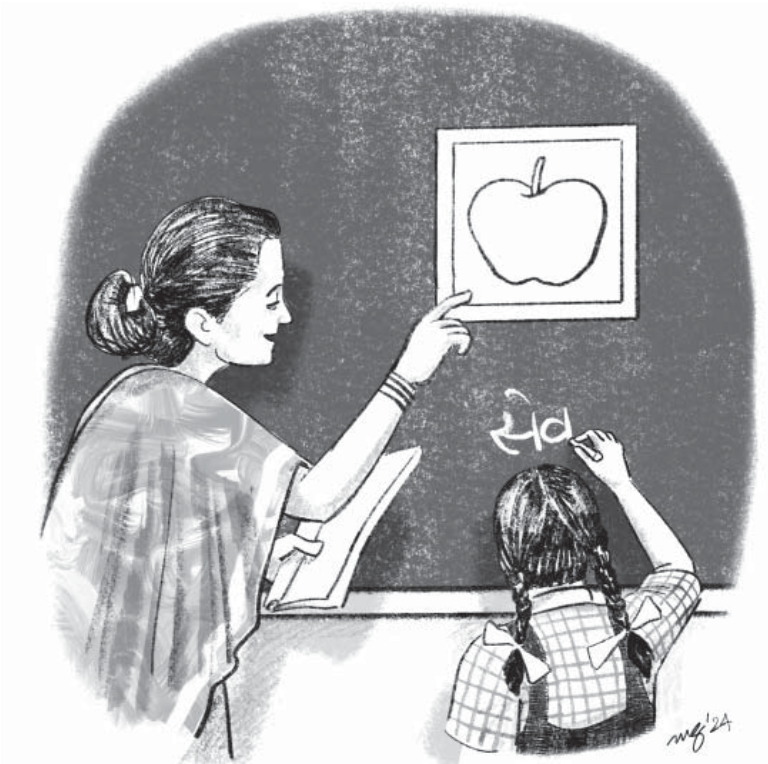

क्या शिक्षक नहीं जानते?

मेरे अनुभव के आधार पर पढ़ना-लिखना सीखने के लिए ज़रूरी है कि बच्चे को पढ़ने-लिखने की ज़रूरत महसूस हो, और उससे इसकी माँग लगातार हो। उसके साथ पढ़ने की प्रक्रिया की जा रही हो, या उसे पढ़ने में भागीदार बनाया जा रहा हो। पुस्तक में या अन्य किसी जगह क्या लिखा है, यह पढ़ सकने के लिए कोई-न-कोई संकेत और सहायता उसे मिल रही हो। शुरुआती पढ़ना सीखने की प्रक्रिया में स्कैफोल्डिंग की ज़रूरत होती है, यानी पढ़ना सीखने की प्रक्रिया में शिक्षक का अथवा किसी पढ़ना जानते वयस्क या साथी का बच्चे के साथ-साथ होना ज़रूरी है। यह साथ इस प्रक्रिया में जितनी सघनता लिए होगा, बच्चे पढ़ पाने का हुनर उतनी शीघ्रता से हासिल करते हैं। शिक्षक का बच्चे के साथ न होना या बहुत कम समय के लिए होना, बच्चे की पढ़ना सीखने की गति को प्रभावित करता है। कक्षा में ऐसे भी अतिरिक्त मौके उपलब्ध नहीं होते जहाँ पढ़ना सीखने के अलग-अलग पड़ाव के बच्चे साथ मिलकर पढ़ते हों।

इन कुछेक सरकारी स्कूलों में शिक्षक का बच्चों के साथ कक्षा में हस्तक्षेप का अनुमानित समय औसतन एक घण्टा प्रतिदिन से कम है। बच्चे के साथ शिक्षक का व्यक्तिगत शैक्षिक सम्पर्क तो एक मिनट प्रतिदिन का भी नहीं है। (यह औसत समय किसी प्रामाणिक शोध का परिणाम नहीं है, बल्कि यह मेरे आसपास के स्कूलों के अवलोकन एवं शिक्षक साथियों व मित्रों के साथ व्यक्तिगत बातचीत के आधार पर एक मोटा-मोटा अनुमान है।)

इन सरकारी स्कूलों में शिक्षक बच्चों के सीखने और शिक्षण के तौर-तरीकों को पढ़कर नियुक्त हुए हैं। पढ़ना कैसे सिखाना है, क्या वे नहीं जानते? स्कूल में शिक्षक और बच्चों के बीच शैक्षिक अन्तर्क्रिया का समय वैसे भी कम था। अब एफएलएन के नाम पर भी शिक्षकों के लम्बे प्रशिक्षण इन बच्चों के समय को अतिक्रमित कर रहे हैं। शिक्षकों को इन प्रशिक्षणों में भाषा विज्ञान और गणित की प्रकृति बताई जा रही है। शिक्षकों और बच्चों के लिए अत्यधिक प्रिंट सामग्री बनाई और छापी जा रही है। बच्चों के आकलन के रिकॉर्ड रखना व दस्तावेज़ बनाना बतलाया जा रहा है। शिक्षकों का इन सब में प्रशिक्षित हो जाना, क्या उनके स्कूल में बच्चों की मौजूदा स्थिति में कोई मददगार परिवर्तन लाएगा? यह सवाल वैसा ही बना हुआ है।

वहीं, दूसरा पहलू यह भी है कि बरकत जैसे बच्चे की माँ विषम परिस्थितियों में भी अपने बच्चे को घर पर पढ़ना-लिखना सिखा देती हैं, और उसके स्कूल पर भरोसा करती हैं कि उसका बच्चा स्कूल में पढ़ना-

बहन द्वारा मुझे उँगली रख-रख कर पढ़ना सिखाने की महत्वपूर्ण भूमिका है। मेरे बहुत-से साथियों से जब यह सवाल किया जाता कि वे पढ़ना कैसे सीखे, तो ज़्यादातर अपने बड़े भाई-बहन या माता-पिता को इसका श्रेय देते हैं। सरकारी स्कूल में आने वाले अधिकांश बच्चों को शिक्षक उनके बड़े भाई-बहन और पालक की भूमिका में मिलने चाहिए। ज़रूरत है कि इन शुरुआती कक्षाओं में बच्चों के पास उनके शिक्षक मौजूद हों जो अपनेपन से उनकी उँगली पकड़े हुए हों।

लिखना सीख रहा है। मैं भी एक ग्रामीण सरकारी स्कूल से पढ़ा हूँ, और मेरे पढ़ना सीखने में मेरी बड़ी

मुकेश मालवीय: विगत 36 वर्षों से शासकीय प्राथमिक कक्षाओं में बच्चों के साथ शिक्षण कर रहे हैं। शुरुआत *एकलव्य* के प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम से जुड़ाव के साथ हुई। तब से बच्चों के सीखने-समझने के अनुभवों पर लगातार लिखते रहे हैं। राज्य और राष्ट्रीय स्तर पर पाठ्यपुस्तक लेखन एवं शिक्षक प्रशिक्षण में भागीदारी करते हैं। बच्चों के लिए कहानियाँ-कविताएँ भी लिखते हैं। वर्तमान में, शासकीय ज्ञानोदय आवासीय विद्यालय, नर्मदापुरम (होशंगाबाद) में शिक्षक हैं।

सभी चित्र: मयूख घोष: महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय, बड़ौदा और रियाज़ स्कूल ऑफ इलस्ट्रेशन, भोपाल से विज़ुअल आर्ट्स में स्नातक। आधे दशक से अधिक समय से स्वतंत्र चित्रकार के रूप में काम कर रहे हैं और *एकलव्य, इकतारा, प्रथम, रूम टू रीड, करडी टेल्स* आदि जैसे कई जाने-माने प्रकाशनों के साथ काम किया है। साथ ही, एनसीईआरटी से सम्बद्ध चित्रकार हैं।

सन्दर्भ:

हृदय कान्त दीवान, 'शिक्षक होने के मायने', 2023 हृदय कान्त दीवान, शिवानी नाग व मनोज कुमार, सम्पादित, अध्यापन कर्म, अध्यापक की छवि व अस्मिता में, अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय एवं वाणी प्रकाशन, 2021, पृष्ठ 307–343.